श्रीनवद्वीपधाम महात्मय

SGD

श्रीलगुरुदेव

श्रीलगुरुदेव

श्रीऋतुद्वीप

इस द्वीप को वर्तमान में 'रातुपुर' कहते हैं। यह अर्चनभक्ति का क्षेत्र है। चूंकि इस स्थान पर सभी ऋतुएँ सब समय विराजमान हैं, इसीलिये इस का नाम 'ऋतुद्वीप' हुआ है। ‘श्रीभक्तिरत्नाकर' नामक ग्रंथ के बारहवीं तरंग में कहा गया है —

"रातुपुर ग्रामेर निकट गिया कय।
देख 'ऋतुद्वीप' ए परम शोभामय॥

पूर्वे वृहद्ग्राम एबे ग्राम नाम मात्र ।
एथा छिला कृष्णेर अनेक भक्तिपात्र ।।

रातुपुर प्रदेश परम चमत्कार ।
एथा गौरांगेर अति अद्भुत विहार ।।

ओहे श्रीनिवास ऋतुद्वीपाव्या ये-मते।
ताहा कहि', - ये कहये प्राचीन
लोकेते।।

एथा छय ऋतु - वर्षा, शरद, हेमन्त ।
शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म सबे मूर्तिमन्त।।

केहो कारू प्रति कहे मधुर भाषाय ।
"हइब प्रकट कृष्णचन्द्र नदीयाय ।।"

केह कहे,— “करिबेन अद्भुत विहार।
तिले तिले मोद बाड़ाबेन मो-सबार ।।"

केह कहे "बजेन्द्रनन्दन गौरहरि।
कतदिने मोद जन्माइब अवतरि" ।।

केह कहे "कलिर प्रथमे अवतार।
श्रीनारदमुनि कैल सर्वत्र प्रचार ।।"

केह कहे, "कह अवतारेर समय।”
केह कहे "वसन्तेर भाग्य अतिशय ।।

हइला वसन्त - ऋतु हर्ष अनिवार।
आपनेइ प्रशंसये भाग्य आपनार ।।

ऋतुराज वसन्त सहित ऋतुगण।
प्रभु अवतीर्ण चिन्ता करे अनुक्षण।।

ऋतुगण बहु अभिलाषे आराधय ।
एइ हेतु ए ऋतुद्वीप नाम पूर्वे कय ।।

वसन्तादि ऋतुछये प्रभुर विलास ।
एबे कि कहिब, आगे हइब प्रकाश ।।

एस्थान दर्शने सब ताप दूरे याय ।
देखये प्रभुर लीला जन्मि' नदीयाय।।"

रातुपुर ग्राम के निकट जाकर श्रीईशान ने कहा — इस परम शोभामय ऋतुद्वीप को देखो। पहले यहाँ बहुत बड़ा बहुत बड़ा गाँव हुआ करता था, अभी नाम मात्र का छोटा सा ग्राम है। यहाँ श्रीकृष्ण के अनेक भक्त रहते थे। रातुपुर प्रदेश, परम

चमत्कारमय है। यहाँ श्रीगौरांग महाप्रभु जी की अति अद्भुत भ्रमण - लीला हुई थी।

ओहे श्रीनिवास ! प्राचीन लोग इसे ऋतुद्वीप क्यों कहते थे, वह मैं कहता हूँ। यहाँ सभी ऋतुएँ अर्थात् वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर, बसन्त एवं ग्रीष्म, मूर्ति रूप से प्रकट होकर आपस में मधुर भाषा में कहती थीं — श्रीकृष्ण चन्द्र नदीया में प्रकट होंगे । कोई कहती थीं — अद्भुत विहार करेंगे भगवान श्रीगौरहरि एवं हम सभी का पद - पद पर आनन्द बढ़ायेंगे ।

कोई कहती — 'ब्रजेन्द्रनन्दन गौरहरि अवतार लेकर बहुत दिन तक आनन्द प्रदान करेंगे। -

कोई कहती कि कलियुग की प्रथम संध्या में अवतार लेंगे, इस प्रकार से श्रीनारद मुनि जी ने सर्वत्र प्रचार किया है। कोई कहती है कि अवतार का समय तो कहो ?

कोई-कोई कहती थी — बसन्त ऋतु का बहुत भाग्य है क्योंकि भगवान इसी ऋतु में प्रकट होंगे। बसन्त ऋतु को यह सुनकर बहुत हर्ष हुआ और वह स्वयं ही अपने भाग्य की प्रशंसा करने लगी। -

ऋतुराज बसन्त सहित सब ऋतुएँ महाप्रभुजी के अवतीर्ण होने की प्रतीक्षा हमेशा करती रहती थीं। बहुत सी अभिलाषा के साथ सभी ऋतुएँ यहाँ पर प्रभु की आराधना करती थीं — इसलिये इसको ऋतुद्वीप कहते हैं। इस स्थान के दर्शन से सब ताप दूर हो जाते हैं एवं भाग्यशाली व्यक्ति नदीया में जन्म लेकर महाप्रभु जी की लीला का दर्शन करता है।

(क) समुद्रगढ़ — यह स्थान नवद्वीप के दक्षिण में अवस्थित है। समुद्र यहाँ पर गंगा जी का आश्रय लेकर श्रीमन्महाप्रभुजी की लीला

दर्शन के लिये आया था, इसलिये इस का नाम 'समुद्रगति' एवं बाद में 'समुद्रगड़ि' हुआ। यह स्थान साक्षात् श्रीगंगासागर तीर्थ है। 'श्रीभक्तिरत्नाकर' नामक ग्रन्थ की बारहवीं तरंग में कहा है —

“एकदिन समुद्र कहेन गंगा -प्रति ।।
जगते तोमा - सम नाइ भाग्यवती ।।

पूर्णब्रह्म श्रीगौरसुन्दर नदीयाय ।
करिबेन प्रकटविहार सबे गाय ।।

तोमार तीरेते ह 'बे अशेष आनन्द ।
गणसह सदा विलसिव गौरचन्द्र ।।

बजे जलक्रीड़ा यैछे करे यमुनाय ।
तैछे क्रीड़ा करिबेन प्रभु गौरराय ।।"

शुनिया जाह्नवी निज अन्तर प्रकाशे ।।
समुद्रेर प्रति कहे सुमधुर भाषे ।।

“मोर ये दुर्भाग्य ता' कहिव कार काछे।
सुख दिया प्रभु महादुःख दिब पाछे ।।

करिब संन्यास प्रभु, छाड़िब नदीया।
तोमार तीरेते वास करिबेन गिया ।।

परम अद्भुत लीला तथा प्रकाशिब ।
निरन्तर तोमार आनन्द बाड़ाइब ।।

तोमार सौभाग्य गाइबेक सर्वजन |
ताहा ना कहिया करो मोरे विडंबन ।।”

समुद्र कहेन “तथा जे कहिला बटे ।
देखिब संन्यासी - वेष या 'ते प्राण
फाटे ॥

सोङरिले से वेष कि करे जानि हिया।
तोमार आश्रय तेञि लइनु आसिया ॥

तुमि देखाइबा एइ नदीया - नगरे ।
भुवनमोहन गौरचन्द्र नटवरे ॥

* * * *

प्रभुर प्रकटादि लीला देखिवार तरे ।
चित्तोद्वेगे सिन्धु कत कहिला गंगारे ॥

गंगाश्रय करिया आइसे निति निति।
देखे गौरचन्देर विहार रंगे भाति ॥

* * * *

गंगार सौभाग्य प्रशंसये बारबार ।
निति गतागति मात्र आश्रय गंगार ॥

गंगासह गतिते 'समुद्रगति' नाम ।
एबे लोके कहये 'समुद्रगड़ि' ग्राम ॥

ए समुद्रगड़िग्राम - वास दर्शनेते ।
उपजे निर्मलभक्ति श्रीगौरचन्द्रेते" ॥

एक दिन समुद्र ने गंगा जी से कहा — तुम्हारे समान जगत में कोई भाग्यवती नहीं है क्योंकि सभी ऐसा कहते हैं कि पूर्णब्रह्म श्रीगौरसुन्दर नदीया में प्रकट होकर गंगा जी में विहार करेंगे। तुम्हारे किनारे पर

श्रीगौरचन्द्र भगवान अपने पार्षदों के साथ विशेष आनन्द की क्रीड़ा करेंगे। व्रज में श्रीकृष्ण ने जैसी यमुना में जलक्रीड़ा की थी, वैसी श्रीगौरसुन्दर गंगा जी में क्रीड़ा करेंगे।

यह बात सुनकर जाह्वी अपने हृदय की बात सुमधुर भाषा में समुद्र से कहने लगी — समुद्र देव ! मेरा जो दुर्भाग्य है, वह किसके पास कहूँ? पहले सुख देकर प्रभु बाद में मुझे महादुःख देंगे क्योंकि कुछ समय नवद्वीप में रहकर व नदीया छोड़कर संन्यास ग्रहण करेंगे और तुम्हारे ही किनारे पर वास करेंगे। वहाँ पर वे परम उदार श्रीगौरहरिजी अद्भुत

लीला प्रकाश करेंगे तथा निरन्तर तुम्हारा आनन्द बढ़ायेंगे | सब लोग तो तब तुम्हारे ही सौभाग्य का गान करेंगे। तुम उसे नहीं कहकर मेरी विडंबना करते हो।

समुद्र ने कहा — 'तुमने जो कहा सो तो ठीक है, किन्तु प्रभु का संन्यास वेश देखकर मेरा कलेजा कांपता है। क्या बताऊँ, मेरा तो यह सोचकर ही कलेजा फट जाता है कि प्रभु गौरहरिजी संन्यास लेकर इस नवद्वीप को छोड़कर चले जाएँगे। प्रभु के संन्यास की बात का स्मरण करके न जाने कलेजे में तीर सा लगता है। उसका स्मरण करने से पता नहीं मेरा

दिल क्यों दहलता है। इसलिये मैं तुम्हारे आश्रय में यहाँ आया हूँ। तुम मुझे इस नदिया नगर में भुवनमोहन श्रीगौरचन्द्र को विविध लीलाएँ करते दिखाओगी।

प्रभु की प्रकटादि लीला देखने के लिये चित्त के उद्वेग के कारण, समुद्र ने गंगा जी को बहुत कुछ निवेदन किया। गंगा जी को आश्रय करके समुद्र श्रीगौरचन्द्र जी की लीला देखने के लिये नित्यप्रति आया करता था एवं लीला देखकर मत्त हो जाता था।

समुद्र बारम्बार गंगा जी के सौभाग्य की प्रशंसा करता था। गंगा जी को आश्रय करके समुद्र प्रतिदिन नवद्वीप में आता जाता रहता था। गंगा जी के साथ समुद्र की गति चलती रहती थी इसलिए इसका 'समुद्रगति' नाम हुआ। अब लोग इसे 'समुद्रगड़ि' गाँव कहते हैं। इस समुद्रगड़ि गाँव में वास एवं समुद्रगढ़ नामक पावन स्थल का दर्शन करके श्रीगौरचन्द्र जी में निर्मल भक्ति उत्पन्न होती है।

इस स्थान का प्राचीन इतिहास यह है — द्वापरयुग में समुद्रसेन नाम के एक कृष्ण भक्त राजा यहाँ राज्य

करते थे। बीच वाले पाण्डव — भीम जब बंगाल पर विजय प्राप्त करने के लिए निकले तो उन्होंने समुद्रगढ़ पर आक्रमण किया। आक्रमण करने पर समुद्रसेन मन- मन में सोचने लगे कि भगवान श्रीकृष्ण पाण्डवगण के अत्यन्त प्रिय हैं। इसलिये मैं यदि भीम को भय दिखाकर मुसीबत में डाल दूँगा तो उसकी रक्षा करने के लिये श्रीकृष्ण अवश्य ही यहाँ आयेंगे एवं में उनके दर्शन करके कृतार्थ हो जाऊँगा। इस प्रकार विचार करके राजा समुद्रसेन ने श्रीकृष्ण का स्मरण करते हुए भीम से बड़ी टक्कर ली। भीम पर लगातार बाण फेंकते रहने

से भीम अत्यन्त भयभीत होकर अपनी रक्षा के लिये श्रीकृष्ण का स्मरण करने लगे। भीम की आर्तनाद सुनकर श्रीकृष्ण उसकी रक्षा करने के लिये इस स्थान पर आये थे एवं यहीं पर उन्होंने अपने भक्त समुद्रसेन को दर्शन दिया था।

राजा अपने इष्टदेव को देखकर आनन्द में अधीर होकर अविरलधारा से प्रेमाश्रु बहाने लगे। देखते देखते अचानक वह लीला अन्तर्हित हो गई और वे दिव्य गौर - लीला का दर्शन करने लगे। महासंकीर्तन के मध्य, भक्तों के साथ श्रीगौरांग रूप में दर्शन पाकर राजा अपने को धन्य मानते

हुए श्रीगौरांग महाप्रभु जी के चरणों में पतित होकर स्तुति करने लगा। इस सम्बन्ध में 'श्रीनवद्वीपधाम माहात्म्य' ग्रन्थ के ग्यारहवें अध्याय में इस प्रकार वर्णित है —

"किछुदूर गिया प्रभु बलेन बचन।
एइ ये 'समुद्रगड़ि' कर दरशन॥

साक्षात् द्वारकापुरी श्रीगंगासागर।
दुइ तीर्थ आछे हेथा देख विज्ञवर॥

श्रीसमुद्रसेन राजा छिल एइ स्थाने।
बड़ कृष्णभक्त कृष्ण बिना नाहि जाने॥

यबे भीमसेन आइल निज सैन्य ल ये।
घेरिल समुद्रगड़ि बंगदिग्विजये।।

राजा जाने कृष्ण एक पाण्डवेर गति ।
पाण्डव विपदे पैले आइसे यदुपति ।।

यदि आमि पारि भीमे देखाइते भय।
भीम - आर्तनादे, हरि हबे दयामय ।।

दया करि' आसिबेन ए दासेर देशे।
देखिब से श्याम-मूर्ति चक्षे अनायासे।।

एतभावि निज सैन्य साजाइल राय ।
गज- बाजि पदातिक लय युद्धे याय ।।

श्रीकृष्ण स्मरिया राजा बाण निक्षेपय।
बाणे जर जर भीम पाइल बड़ भय ।।

मने मने डाके कृष्णे विपद देखिया ।।
'रक्षा कर भीमे नाथ श्रीचरण दिया ।।

समुद्रसेनेर सह युझिते ना पारि ।
भंग दिले बड़ लज्जा ताहा सहिते
नारि ।।

पाण्डवेर नाथ कृष्ण, पाइ पराजय ।
बड़इ लज्जा कथा ओहे दयामय ।।

भीमेर करुण - नाद शुनि' दयामय ।
सेइ युद्धस्थले कृष्ण हइल उदय।।

ना देखे से रूप केह अपूर्व घटना।
श्री समुद्रसेन मात्र देखे एकजना ।।

नवजलधर - रूप, कैशोर मूरति ।
गले दोले वनमाला मुकुतार भाति ।।

सर्व अंगे अलंकार अति सुशोभन ।
पीतवस्त्र परिधान अपूर्व गठन ।।

से रूप देखिया राजा प्रेमे मूर्च्छा याय।
मूर्च्छा संवरिया कृष्णे प्रार्थना
जानाय।।

'तुमि कृष्ण जगन्नाथ पतितपावन ।
पतित देखिया मोरे तव आगमन ।।

तव लीला जगज्जन करय कीर्तन।
शुनि' देखिवार इच्छा हइल करवन ।।

किन्तु मोर बत छिल ओहे दयामय ।
एइ नवद्वीपे तब हइबे उदय ।।

हेथाय देखिब तव रूप मनोहर ।
नवद्वीप छाड़िवारे ना हय अन्तर ।।

सेइ व्रत रक्षा मोर करि' दयामय ।
नवद्वीपे कृष्णरूपे हइले उदय ।।

तथापि आमार इच्छा अति गूढ़तर।
गौरांग हउन मोर अक्षिर गोचर ।।

'देखिते देखिते राजा सम्मुखे
देखिल।।
राधाकृष्ण- लीलारूप माधुर्य अतुल।।

श्रीकुमुदवनेकृष्ण सरवीगण सने ।
अपराहे करे लीला गिया गोचारणे ।।

क्षणेके हइल सेइ लीला अदर्शन ।
श्रीगौरांग - रूप हेरे भरिया नयन ।।

महासंकीर्तन - वेश संगे भक्तगण ।
नाचिया नाचिया प्रभु करेन कीर्तन ।।

पुरट - सुन्दर - कान्ति अति मनोहर ।
नयन माताय अति काँपाय अन्तर ।।

सेइ रूप हेरि' राजा निजे धन्य माने ।
बहु स्तव करे तबे गौरांग- चरणे ।।

कतक्षणे से सकल हइल अदर्शन ।
कांदिते लागिल राजा ह'ये अन्यमन।।

भीमसेन एइ पर्व ना देखे नयने ।
भावे राजा युद्धे भीत हैल एतक्षणे ।।

अत्यन्त विक्रम करे पाण्डुर नन्दन ।
राजा तुष्ट ह ये कर याचे ततक्षण ।।

कर पेये भीमसेन अन्यस्थाने याय।
भीम - दिग्विजय सर्व जगतेते गाय ।।

एइ से समुद्रगड़ि नवद्वीप - सीमा ।
ब्रह्मा नाहि जाने एइ स्थानेर महिमा।।"

भावानुवाद — "कुछ दूर जाकर श्रीनित्यानन्द प्रभु श्रीजीव हे जीव गोस्वामी जी को कहने लगे — 'समुद्रगड़ि' का दर्शन करो। विज्ञवर ! साक्षात् द्वारकापुरी और श्रीगंगासागर

दोनों तीर्थों को यहाँ देखो। इस स्थान के राजा श्रीसमुद्रसेन थे, जो बड़े कृष्ण भक्त थे। वे श्रीकृष्ण के बिना कुछ नहीं जानते थे। जब भीमसेन ने दिग्विजय करने के लिए अपनी सेना द्वारा समुद्रगड़ि को घेर लिया था तो तब राजा ने विचार किया कि श्रीकृष्ण ही पाण्डवों की एक मात्र गति हैं। पाण्डवों पर विपत्ति आने पर यदुपति आते हैं। यदि में युद्ध में भीम को भय दिखा सकूँ, तब भीम की पुकार पर श्रीहरि दया करके इस दास के देश में आयेंगे। तब अनायास ही में उस श्याम - मूर्ति को अपनी आँखों से देख सकूँगा। ऐसा विचार

करके राजा समुद्रसेन अपने हाथी, घोड़े एवं पैदल सेना को लेकर युद्ध करने निकल पड़ा। श्रीकृष्ण को स्मरण करके राजा समुद्रसेन भीमसेन व उसकी सेना पर ताबड़तो, बाणों की वर्षा करने लगा। बाणों से पीड़ित होकर भीम को बहुत भय हुआ। विपत्ति देखकर भीम श्रीकृष्ण को मन ही मन याद करते हुए प्रार्थना करने लगा — हे नाथ! मैं समुद्रसेन से लड़ने में असमर्थ हूँ, पराजय होने पर मुझे बहुत लज्जा लगेगी, जो सहन न होगी। हे पाण्डवों के नाथ श्रीकृष्ण ! हे दयामय ! श्रीचरणों का दर्शन देकर मेरी रक्षा करो।

भीम की करुण - नाद सुनकर दयामय श्रीकृष्ण युद्ध-स्थल में ही प्रकट हो गये। परन्तु वहाँ एक अपूर्व घटना हुई, वह ये कि श्रीसमुद्रसेन ही श्रीकृष्ण का दर्शन कर रहे थे और कोई नहीं। भक्त राजा समुद्रसेन ने देखा कि श्रीकृष्ण का नव मेघ के समान रूप था, उनकी कैशोर मूर्ति थी व उन्होंने गले में वनमाला धारण की हुई थी। उनके सभी अंगों में अलंकार अति शोभा पा रहे थे। उन्होंने पीतवस्त्र धारण किया हुआ था। उनके शरीर का अपूर्व गठन था। उस रूप को देखकर राजा प्रेम में मूच्छित हो गये।

लगे होश आने पर राजा समुद्रसेन श्रीकृष्ण जी से प्रार्थना करने हे श्रीकृष्णजी ! तुम पतितपावन हो। आप जगन्नाथ हो। मुझे पतित देखकर ही आपका यहाँ आगमन हुआ है। जगतवासी आपकी दिव्य लीलाओं का कीर्तन करते रहते हैं। यह सब सुनकर बड़े लम्बे समय से मेरी आपके दर्शन करने की इच्छा थी। हे दयामय ! किन्तु मेरा व्रत था कि जब आप इस नवद्वीप में प्रकट होंगे तब यहीं पर आपका मनोहर रूप देखूँगा । नवद्वीप को छोड़ने की मेरी अन्दर से ज़रा सी भी इच्छा नहीं है। हे प्रभो ! मेरी एक और प्रगाढ़ इच्छा

है, वह ये कि आप श्रीगौरांग रूप से मेरे सम्मुख प्रकट होइये। राजा समुद्रसेन अपनी प्रार्थना जना ही रहे थे कि उन्होंने श्रीकृष्ण की कृपा से अपने सन्मुख श्रीराधाकृष्णजी की दिव्य लीला के अतुल माधुर्य को देखा। फिर देखा कि श्रीकृष्ण, श्रीकुमुदवन में गोचारण में जाकर गोपियों के साथ अपराह्न काल में अर्थात् दोपहर के बाद के समय में लीला कर रहे हैं। क्षणकाल में वह लीला भी अदर्शन हो गई एवं उसके बाद भक्त राजा समुद्रसेन भगवान श्रीकृष्ण के श्रीगौरांग रूप को नयन भरकर देखने लगे। महासंकीर्तन वेश

में भक्तगणों के साथ प्रभु नाच नाचकर कीर्तन कर रहे हैं। प्रभु की तपाये हुए सोने के समान अति मनोहर कान्ति है जिसको देखकर नयन मत्त हो जाते हैं एवं हृदय दिव्य - प्रेम में कांपता रहता है। उस रूप को देखकर राजा अपने को धन्य मानने लगा एवं श्रीगौरांग महाप्रभु जी के चरणों में लोटपोट होकर स्तव करने लगा। कुछ क्षण के बाद वह सब लीला अदर्शन हो गई और लीला न देखकर राजा सभी के सामने रोने लगा। भगवान श्रीहरि की इच्छा से भीमसेन यह सब लीला देख नहीं पाया। वह सोचने लगा कि राजा अब

युद्ध से डर गया है इसीलिए ज़मीन में लोट-पोट हो रहा है, दण्डवत् प्रणाम कर रहा है व कुछ गिड़गिड़ा रहा है। तब पाण्डव - नन्दन भी अपने पराक्रम का प्रदर्शन करता हुआ बड़े उत्साह के साथ युद्ध करने लगा। भीमसेन के पराक्रम को देखकर राजा समुद्रसेन बड़ा सन्तुष्ट हुआ और उसने अपने सेनापतियों को युद्ध बन्द कर देने की घोषणा की तथा बहुत सी भेंट लेकर भीमसेन की ओर आगे बढ़ा। भेंट पाकर, भीमसेन अन्य स्थान को चले गये। सभी देखने वाले भीमसेन के दिग्विजय का गान करने

लगे। यह समुद्रगड़ि भी नवद्वीप के मध्य ही है।

(ख) **चाँपाहाटी** — इस गांव में गौरपार्षद श्रीद्विज वाणीनाथ का घर था। उनका प्रतिष्ठित श्रीगौर- गदाधर विग्रह अभी भी इस स्थान पर विराजमान है। प्राचीन श्रीपाट की सेवा में नितान्त अनियमितता दर्शन करके सन् 1922 में ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद ने श्रीपाट की सेवाभार को ग्रहण करके इस स्थान का संस्कार करके वहाँ श्रीगौर- गदाधर मठ स्थापन किया था। अब यहाँ श्रीद्विज वाणीनाथजी

के प्रतिष्ठित विग्रह श्री श्रीगौर - गदाधरजी शास्त्र - विधान अनुसार अर्चित होते हैं।

इस स्थान का पूर्व इतिहास इस प्रकार है — सत्ययुग में एक वृद्ध भक्त ब्राह्मण इस स्थान पर वास करते थे। तब यहाँ प्रचुर परिमाण में चंपा के फूलों की पैदावार होती थी, इसलिये गाँव 'चंपाहाटी' के नाम से प्रख्यात है। ब्राह्मण नित्यप्रति चंपकहट्ट से चंपा के फूल एकत्रित करके व बड़ा प्रसन्न होकर श्रीराधा - गोविन्द जी की पूजा करते थे। भक्त वत्सल श्रीकृष्ण जी ने उस विप्र की ऐकान्तिकी भक्ति से प्रसन्न होकर उसे अपने श्रीगौररूप

से दर्शन दिया था। श्रीकृष्ण का यह श्रीगौररूप दर्शन करके विप्र अत्यन्त व्याकुल हो गये। श्रीगौरहरि जी ने विप्र की ये व्याकुल अवस्था देखी तो उससे कहा — “ओहे विप्र! तुम, व्याकुल मत हो। मैं, कलियुग के प्रारम्भ में अपने श्रीधाम श्रीमायापुर में श्रीजगन्नाथ मिश्र के पुत्र रूप से अवतीर्ण होऊँगा। उस समय तुम भी चंपकहट्ट गाँव में जन्म ग्रहण करोगे तथा मेरा यह रूप निरन्तर दर्शन करोगे। यह विप्र ही श्रीगौरलीला में श्रीद्विज वाणीनाथ के नाम से प्रसिद्ध हुए। इस स्थान का माहात्म्य “श्रीनवद्वीपधाम - माहात्म्य" नामक

ग्रन्थ के ग्यारहवें अध्याय में इस प्रकार से वर्णित है —

“तवे नित्यानन्द आइला चम्पाहट्ट ग्राम।
वाणीनाथ - गृहे तथा करिल विश्राम।।

अपराहे चम्पाहट्ट करय भ्रमण।
नित्यानन्द बल शुन बल्लभ - नन्दन।।

एइ स्थाने छिल पूर्वे चंपक कानन।
खदिर वनेर अंश सुन्दर दर्शन ।।

चंपकलता सखी नित्य चंपक लइया ।
माला गांथि' राधाकृष्णे सेवितेन गिया।।

कलि वृद्धि हइले सेइ चंपक - कानने।
मालिगण फूल लय अति हृष्टमने ।।

हट्ट करि' चंपक - कुसुम ल 'ये वसि ।
विक्रय करय, लय यत ग्रामवासी।।

सेइ हइते, श्रीचंपकहट्ट हैल नाम ।
चांपाहाटि सबे बले मनोहर धाम ।। "

इस चंपकहट्ट का पूर्व इतिहास 'श्रीभक्तिरत्नाकर' के द्वादश तरंग में इस प्रकार वर्णित है —

“एत कहि' ईशान समुद्रगुड़ि हैते ।
परम आनन्दे चले चंपकहट्टते ।।

श्रीनिवासे कहे, ए चंपकहट्ट ग्राम।
चाँपाहाटि नाम ए विदित रम्यस्थान।।

एइवाने आछिल चंपक वृक्षवन ।
पुष्प आहरण सदा करे मालिगण।।

मालिगण चंपक कुसुम सज्ज करि ।
एथाइ वैसये हाट पाति' सारि सारि ।।

महासुखे कतशत ब्राह्मण सज्जन ।
किनिया चंपक पुष्प करे देवार्चन ।।

चाँपापुष्प- हाटे चांपाहाटि नाम हय ।
इथे से विशेष कहि विज्ञे ये कहय।।

एथा छिल वृद्ध एक विप्र विद्यावान ।
श्रीकृष्णे अनन्य भक्ति सर्वांशे प्रधान।।

एकदिन अनेक चंपक पुष्प लइया ।
कृष्णपाद - पद्म पूजे महाहर्ष हैया ।।

श्यामल सुन्दर रूप धियाय अन्तरे ।
देवे गौररूप से श्यामल कलेवरे ।।

गौरकान्ति चांपापुष्प पुंजेर सामान ।
देखिते देखिते रूप हइल अन्तर्धान ।।

गौररूप अन्तर्धाने व्याकुल हियाय ।
एकदृष्टे चंपकपुष्पेर पाने चाय ।।

चंपकपुष्पपुन्जेर रुचि निरखिया ।
वेदादि प्रमाण पाठे उमड़ये हिया ।।

कतक्षणे स्थिर हइया शास्त्र - मते
कय।
युगमध्ये एइ कलियुग धन्य हय ।।

एइ कलियुगे कृष्ण हबे अवतीर्ण ।
धरिबेन भुवन - मोहन पीतवर्ण ।

संकीर्तन-यज्ञे यजिबेक विज्ञ तारे।
जगत भासिव प्रभु - लीलार पाथारे ।।

शास्त्र विचारिया पुनः करिल निर्धार ।
नवद्वीपे ह 'बे ए ना प्रभु अवतार ।।

अवतीर्ण हइते बहुदिन आछे जानि।
ना देखिब से गौरसुन्दर तनुखानि ।।

एत कहि' अति दीर्घ निश्वास छाड़य।
मुख बुक भासे, दुइ नेत्रे धारा बय ।।

अत्यन्त व्याकुल, धैर्य धरिते ना पारे।
प्रभुर इच्छाय निद्रा आकर्षिल तारे ।।

स्वप्नच्छले देखा दिला प्रभु गौरहरि ।
चंपककुसुम- सम रूपेर माधुरी ।।

कोटि कोटि चन्द्रमा जिनिया
मुखचाँद।
शिरे चारु चाँचर चिकुर काम फांद।।

नेत्र, बाहु, वक्षेर उपमा नाइ दिते ।
जगत मोहित करे सर्वांग भंगिते ।।

शोभा देखि' विप्र, महा उल्लसित मने।
करिल अनेक स्तुति पड़िया चरणे ।।

विप्रे कृपा करि' प्रभु अदर्शन हैते ।
मूच्छित हईया विप्र पड़िल भूमिते ।।

कतक्षणे चेतन पाइया विप्रराय ।
अनुरागे हइलेन उन्मादेर प्राय ।।

चंपककुसुम प्रति कहे बेरि - बेरि ।
तुमि स्फुराइला मोरे गौर अवतारि ।।

चंपक - प्रशंसा वाक्य- घटा हट्ट मते ।
चंपकहट्टाख्या हैल प्रसिद्ध लोकेते ।।

प्रभुर इच्छाय विप्र सुस्थिर हइया।
आज्ञा हैल' हबे पूर्ण मने ये करिला ॥

शुनि' महानन्दे विप्र प्रभु - गुण गाय।
सदा चिन्ते' प्रभुवे देखिव नदीयाय ॥

प्रभु - विप्र विप्रेर शुनिनू ये ये क्रिया।
ये सकल कहिते नारिनू विस्तारिया

भावानुवाद - तब श्रीनित्यानन्द प्रभु ने चपाहट्ट ग्राम में आकर श्रीवाणीनाथ के घर पर विश्राम किया। दोपहर बाद जब वे चपाहट्ट में भ्रमण कर रहे थे तो श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्री जीव गोस्वामीजी से कहा बल्लभनन्दन ! सुनो, इस स्थान पर

चंपक नामक फूलों का बहुत बड़ा बगीचा था जो ब्रजमण्डल खदिर वन का अंश है। चंपकलता सखी यहाँ आकर प्रतिदिन सारे चंपक फूल तोड़कर उनकी माला बनाकर श्रीराधाकृष्ण सेवा में लगाती थीं। कलियुग आने पर इसी चंपक फूलों के के माली बड़े प्रसन्न होकर चंपक के फूलों को तोड़कर और यहीं पर हाट (बाज़ार) में बेचते थे। विभिन्न गाँवों के यहाँ हाट में चंपक के फूलों को लेने आते थे। चूँकि यहाँ चंपक फूलों की हाट लगा करती थी, इसलिए इसका नाम पकहट्ट हुआ। आजकल इसे चांपाहाटी भी कहते हैं।

इस चंपकहट्ट का पिछला इतिहास 'श्रीभक्तिरत्नाकर' के बारहवें तरंग में इस प्रकार वर्णित है

"इतना कहकर ईशान व श्रीनिवास समुद्रगड़ि से परम आनन्द साथ चंपकहट्ट को चले गये। ईशान श्रीनिवास को कहते कि यह चंपकहट्ट गाँव है। इसे चाँपाहाटी भी कहा जाता यह सुन्दर स्थान है। यहाँ चंपक के फूलों के वृक्षों का वन । माली यहाँ के चंपक फूलों को तोड़कर व उनकी माला बनाकर बेचने को बैठ जाते थे। इसी स्थान से सैंकड़ों की संख्या ब्राह्मण व सज्जन लोग चंपक फूल खरीद कर भगवान व - देवताओं की

पूजा के लिए ले जाते थे। यहाँ चांपा फूल हाट (बाज़ार) होने पर इस स्थान का नाम चांपाहाटि पड़ गया।

विद्वान लोग इस स्थान की जो महिमा बताते हैं, मैं वह यहाँ एक वृद्ध भी आपको बताता हूँ। वह इस प्रकार है बहुत ब्राह्मण रहता था। उसकी श्रीकृष्ण में अनन्य भक्ति थी। एक दिन से चंपक फूल लेकर वह बड़े आनन्द के साथ श्रीकृष्ण के पादपद्मों की पूजा कर रहा था कि उसने हृदय में भगवान श्रीश्यामसुन्दर के रूप का ध्यान करते समय श्यामल कलेवर में ही श्रीगौर रूप को देखा। उस समय महाप्रभु जी की चंपक फूलों की तरह

गौरकान्ति थी। परन्तु देखते ही देखते वह अन्तर्धान हो गया। अचानक श्रीगौर रूप के अन्तर्धान से विप्र का हृदय व्याकुल हो उठा। तभी विप्र ने एक दृष्टि से चंपक के फूलों को देखा। चंपक फूलों के गुच्छों का पीला रंग देखकर वेदादि शास्त्रों के प्रमाणों को स्मरण करके विप्र का हृदय भर आया। कुछ देर बाद ही स्थिर होकर शास्त्र प्रमाणों के साथ वे कहने लगे — युगों के बीच में कलियुग धन्य है। इस कलियुग में श्रीकृष्ण भुवन मोहन पीतवर्ण धारण करके अवतीर्ण होंगे। बुद्धिमान लोग संकीर्तन-यज्ञ से उनकी आराधना

करेंगे एवं प्रभु के लीलासागर पुन: निश्चय में जगत डूब जायेगा। विप्र ने शास्त्र को विचार करके उनके किया कि नवद्वीप में ही प्रभु का अवतार होगा। परन्तु अवतीर्ण होने में अभी बहुत दिन बाकी हैं। तब तो मैं श्रीगोरसुन्दर का दर्शन नहीं कर सकूँगा, यह सोचते हुए व अति दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए उनके दोनों नेत्रों से अश्रु धारा बहने लगी। आँसुओं से उनका सारा चेहरा व छाती भीग गई। अत्यन्त व्याकुल हो गये विप्र । अपने को बहुत तरह से समझाने पर भी धैर्य धारण नहीं कर सके, तब प्रभु की इच्छा से निद्रा ने उन्हें आकर्षित

किया। सपने के छल में महाप्रभु श्रीगौरहरिजी ने विप्र को पुन: दर्शन दिया। उस समय पीत चांपा फूलों के समान उनकी रूप माधुरी थी। उनका मुखड़ा कोटि कोटि चन्द्रमा को भी जय कर रहा था। सिर पर सुन्दर घुंघराले बाल थे। उनके नेत्र बाहु व वक्ष इतने सुन्दर थे कि किसी भी वस्तु से उनकी उपमा नहीं दी जा सकती। उनकी सर्वांग- भंगी, जगत को मोहित कर रही थी। महाप्रभु जी की शोभा देखकर बड़े उल्लसित मन से विप्र ने उनके चरणों में पड़कर बहुत सी स्तुति की। विप्र पर कृपा करके जब महाप्रभु अन्तर्हित हुए, तब

विप्र स्वप्न में ही मूच्छित होकर भूमि पर गिर पड़े। कुछ क्षण बाद चेतनता पाकर विप्रवर, प्रेम उन्माद में विभोर हो गये। चांपा फूलों के गुच्छों के प्रति बार - बार कहने लगे तुम्हीं ने श्रीगौर अवतार की मुझे स्फूर्ति कराई है। विप्र तो उन्मादी व्यक्ति की तरह अनर्गल बड़बड़ाने लगे तथा हाट में बेचने वालों की तरह बहुत तरह से चांपा - फूलों की प्रशंसा करने लगे।

चूँकि यहाँ चाँपा फूल का बहुत बड़ा बगीचा था, चाँपा फूलों का व्यापार यहाँ होता था, दूर-दूर से लोग यहाँ चाँपा फूल लेने आते थे तथा विप्र ने चाँपा फूल के चमकते

पीले रंग की तरह यहाँ पर श्रीगौरहरि जी का दर्शन किया था, इसलिए लोगों में यह स्थान चंपकहट्ट या चाँपा हाटी के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

(ग) **श्रीजयदेव जी का श्रीपाट** — ऐसा कहा गया है कि 'श्रीगीतगोविन्द' के रचयिता, भक्तकवि श्रीजयदेव जी ने राजा लक्ष्मण सेन के राजत्वकाल में इस चांपाहाटी में कुछ दिन वास करके रागमार्ग से श्रीराधा गोविन्द की भावसेवा करते-करते पुरटसुन्दरद्युति श्रीगौरसुन्दर के दर्शनों का सौभाग्य लाभ किया था, जोकि

'श्रीनवद्वीपधाम माहात्म्य' के ग्यारहवें अध्याय में इस प्रकार वर्णित है —

'ये काले लक्ष्मणसेन नदीयार राजा।
जयदेव नवद्वीपे हन ताँर प्रजा ॥

बल्लालदीर्घिकाकूले बाँधिया कुटिर।
पद्मासह बैसे तथा जयदेव धीर ॥

दश अवतार स्तव रचिल तथाय।
सेइ स्तव लक्ष्मणेर हस्ते कभु याय ॥

परम आनन्दे स्तव करिल पठन।
जिज्ञासिल राजा, स्तव कैल कोन जन?

गोवर्धन आचार्य, राजारे तबे कय ।
महाकवि जयदेव रचयिता हय ॥

कोथा जयदेव कवि, जिज्ञासे भूपति ।
गोवर्धन बले एइ नवद्वीपे स्थिति ॥

शुनिया गोपने राजा करिया सन्धान ।
रात्रयोगे आइल तबे जयदेव- स्थान ॥

वैष्णववेशेते राजा कुटिरे प्रवेशे ।
जयदेवे नति करि' वैसे एकदेशे ॥

जयदेव जानिलेन भूपति एजन।
वैष्णववेशेते आइल ह ये अकिन्चन ॥

अल्पक्षणे राजा तबे देय परिचय।
जयदेवे याचे याइते आपन आलय॥

अत्यन्त विरक्त जयदेव महामति ।
विषाय - गृहेते येते ना करे सम्मति।।

कृष्णभक्त जयदेव बलिल तरखन।
तव देश छाड़ि' आमि करिब गमन ।।

विषयि - संसर्ग कभु ना देय मंगल।
गंगा पार ह ये याब यथा नीलाचल ।।

राजा बले शुन प्रभु आमार वचन ।
नवद्वीप त्याग नाहि कर कदाचन ।।

तव वाक्य सत्य हबे, मोर इच्छा रखे।
हेन कार्य कर देव, मोरे कृपा यबे ।।

गंगापारे चंपहट्ट स्थान मनोहर ।
सेइ स्थाने थाक तुमि दु'एक वत्सर ।।

मम इच्छा मते, आमि तथा ना याइब।
तव इच्छा ह'ले, तव चरण हेरिब ।।

राजार वचन शुनि', महा कविवर ।
सम्मत हइया बले वचन सत्वर ।।

यद्यपि विषयी तुमि ए राज्य तोमार ।
कृष्णभक्त तुमि, तव नाहिक संसार ।।

परीक्षा करिते आमि विषयी बलिया।
संभाषिनु, तबु तुमि सहिले शुनिया ।।

अतएव जानिलाम तुमि कृष्णभक्त ।
विषय लइया फिर, ह'ये अनासक्त ।।

चंपकहट्टेते आमि किछुदिन रब ।
गोपने आसिबे तुमि छाड़िया वैभव।।

हृष्टचित ह'ये राजा अमात्य द्वाराय ।
चंपकहट्टेते गृह निर्माण कराय ।।

तथा जयदेव कवि, रहे दिन कत ।
श्रीकृष्णभजन करे रागमार्गमत ।।

पद्मावती देवी आने चंपकर भार ।
जयदेव पूजे कृष्ण नन्देर कुमार ।।

महाप्रेमे जयदेव करय पूजन ।
देखिल श्रीकृष्ण हइल चंपकवरण ।।

पुरटसुन्दरकान्ति अति मनोहर ।
कोटिचन्द्रनिन्दि' मुख परम सुन्दर ।।

चाँचर चिकुर शोभे गले फूलमाला।
दीर्घबाहु रूपे आलो करे पर्णशाला।।

देखिया गौरांगरूप महाकविवर ।
प्रेमे मूर्च्छा याय चक्षे अश्रु झर झर ।।

पद्मावती देवी सेइ रूप निरखिया ।
हइल चैतन्यहीन भूमेते पड़िया ।।

पद्महस्त दिया प्रभु तोले दुइ जने ।
कृपा करि' बले तवे अमिय - वचने ।।

तुमि दोंहे, मम भक्त परम उदार ।
दरशन दिते इच्छा हइल आमार ।।

अति अल्पदिने एइ नदीया - नगरे ।
जनम लइव आमि शचीर उदरे ।।

सर्व अवतारेर सकल भक्त सने ।
श्रीकृष्णकीर्तने वितरिव प्रेमधने ।।

चब्बिश वत्सरे आमि करिया संन्यास।
करिब अवश्य नीलाचलेते निवास॥

तथा भक्तगण संगे महाप्रेमावेशे ।
श्रीगीतगोविन्द आस्वादिव अवशेषे ॥

तव विरचित गीतगोविन्द आमार ।
अतिशय प्रियवस्तु कहिलाम सार ॥

एइ नवद्वीप - धाम परम चिन्मय ।
देहान्ते आसिबे हैथा कहिनु निश्चय ॥

एबे तुमि दोंहे जाओ यथा नीलाचल ।
जगन्नाथे सेव गिया, पावे प्रेमबल ॥

एत बलि' गौरचन्द्र हैल अदर्शन ।
प्रभुर विच्छेदे मूर्च्छा हय दुइजन॥

ओहे जीव, एइ जयदेवस्थान हय।
उच्चभूमि मात्र आछे वृद्धलोके कय॥

जयदेव स्थान देखि' श्रीजीव तखन।
प्रेमे गड़ागड़ि याय करय रोदन॥

धन्य जयदेव कवि धन्य पद्मावती।
श्रीगीतगोविन्द धन्य धन्य कृष्णरति॥

जयदेव भोग कैल येइ - प्रेमसिन्धु।
कृपा करि' देह मोरे तार एक बिन्दु॥"

भावानुवाद — जिस समय श्रीलक्ष्मणसेन नदीया (बंगाल) के राजा थे, श्रीजयदेव जी नवद्वीप में ही उनकी प्रजा की तरह रहते थे। बल्लालदीर्घिका के किनारे कुटिया

बनाकर वे अपनी पत्नी श्रीमती पद्मावती के साथ बड़े धीर- स्थिर भाव से रहते थे। यहीं पर रहकर श्रीदशावतार स्तोत्र की उन्होंने रचना की थी। एक बार यह स्तोत्र राजा लक्ष्मणसेन के हाथ लगा। अद्भुत स्तोत्र देखकर राजा बड़े उल्लसित हुए एवं उस स्तोत्र का उन्होंने बड़े भक्ति - भाव से पाठ किया। बाद में राजा जिज्ञासा करने लगे कि इस स्तव की रचना किसने की है? तब श्री गोवर्धन आचार्य ने राजा को कहा कि महाकवि श्रीजयदेव इस स्तव के रचयिता हैं । राजा ने फिर जिज्ञासा की श्रीजयदेव कहाँ रहते हैं?

गोवर्धन आचार्य कहने लगे कि नवद्वीप में उनका वास है।

यह सुनकर राजा ने गुप्त रूप से उनकी तलाश की और चुपचाप रात को श्रीजयदेव के स्थान पर आये। उस समय श्रीजयदेवजी अपनी भक्तिमति पत्नी के साथ बैठकर हरिनाम कर रहे थे। वैष्णव वेष में राजा ने जयदेव जी की कुटिया में प्रवेश किया और श्रीजयदेव को नमस्कार करके एक कोने में बैठ गये। श्रीजयदेव समझ गये कि यह राजा है, वैष्णव वेष में अकिंचन होकर आया है। थोड़ी बातचीत के बाद राजा ने अपना परिचय दिया एवं श्रीजयदेव से

अपने महल में चलने की प्रार्थना की। श्रीजयदेव जी अत्यन्त विरक्त थे, विषयी के घर में जाने को सहमत नहीं हुए। बार बार राजा द्वारा आग्रह करने पर श्रीकृष्ण भक्त श्रीजयदेव कहने लगे — ज्यादा ज़ोर ज़बरदस्ती करोगे तो मैं तुम्हारे इस देश को छोड़कर नीलाचल में चला जाऊँगा क्योंकि मैंने सुना है कि विषयी लोगों का संग कभी भी मंगलदायक नहीं होता।

यह सुनकर राजा बोले — कृपया नवद्वीप त्याग मत करिये। आपका वाक्य भी सत्य हो जाये, एवं मेरी इच्छा भी रह जाय। हे देव! मुझ

पर कृपा करके, ऐसा कार्य करो। गंगा किनारे मनोहर चंपकहट्ट स्थान है, उस स्थान पर, आप एक दो वर्ष तक वास करें। आपकी इच्छा होने से आपके चरण दर्शन करूँगा। यदि आपकी इच्छा नहीं होगी तो वहाँ भी नहीं आऊँगा।

राजा के वचन सुनकर महाकविवर अपनी सहमति देकर कहने लगे — राजा ! यद्यपि तुम विषयी हो, किन्तु तुम तुम्हारी संसार में आसक्ति नहीं है। परीक्षा के लिये मैंने तुम्हें विषयी कहकर सम्बोधित किया। किन्तु तुमने सुनकर सहन कर लिया। इससे मुझे मालूम हो गया कि

तुम श्रीकृष्ण भक्त हो। विषय लेकर रहते हुए भी अनासक्त हो। चंपकहट्ट में में कुछ दिन रहूँगा। तुम वैभव छोड़कर गुप्त रूप से मिलने आना।

राजा यह सुनकर हर्षित हुआ एवं अपने लोगों के द्वारा उसने चंपकहट्ट में जयदेव जी के लिए एक झोंपड़ी का निर्माण करा दिया। वहाँ श्रीजयदेव कवि, कुछ दिन रहकर रागमार्ग से, श्रीकृष्ण भजन करने लगे। पद्मावती देवी स्वयं बगीचे में जाकर बहुत से चंपाफूल लेकर आती थीं और श्रीजयदेव उनसे नन्दनन्दन भगवान श्रीकृष्ण की पूजा करते थे।

पूजा करते हुए एक दिन जयदेव जी ने देखा कि श्रीकृष्ण चंपाफूल के वर्ण यानी पीतवर्ण के हो गये हैं। एक फूल ने तो मुस्कुराते हुए श्रीगौरांग महाप्रभु की आकृति ले ली । तपाये हुए सोने के समान उनकी सुन्दर कान्ति अति मनोहर लग रही थी। उनका मुखकमल करोड़ों चन्द्रमाओं का भी तिरस्कार करता हुआ, परम सुन्दर था। सिर पर घुंघराले केश शोभा पा रहे थे। उन्होंने गले में फूलों की माला धारण की हुई थी। उनके दीर्घ बाहु थे। वे अपने रूप से झोंपड़ी को आलोकित कर रहे थे। श्रीगौरांग रूप देखकर महाकविवर प्रेम में

मूच्छित हो गये एवं उनकी आंखों से अश्रु झरने लगे। पद्मावती देवी भी उस रूप को देखकर चेतनाहीन होकर भूमि पर पड़ गई।

श्रीमहाप्रभु जी अपने कर कमलों के द्वारा बड़े स्नेह के साथ दोनों को उठाने लगे एवं कृपा करके अमृतमय वचन कहने लगे — तुम दोनों मेरे परम उदार भक्त हो । इसलिए तुम्हें दर्शन देने की मेरी इच्छा हुई। अभी कुछ समय बाद ही मैं इस नदिया नगर में श्रीशचीदेवी के उदर से जन्म लेने की लीला करूँगा। अब तक मेरे जितने भी अवतार हुए हैं, उन सभी के पार्षदों को मैं इस लीला में लेकर

आऊँगा और सभी को अपने सुदुर्लभ श्रीकृष्ण कीर्तन द्वारा प्रेमधन वितरण करूँगा। चौबीस वर्ष के अन्त में मैं सन्यास ग्रहण करके अवश्य नीलाचल में वास करूँगा। वहाँ भक्तगणों के साथ महाप्रेम के आवेश में मैं तुम्हारे द्वारा रचित श्रीगीतगोविन्द का आस्वादन करूँगा। तब तुम्हारे द्वारा विरचित श्रीगीतगोविन्द मेरी अतिशय प्रियवस्तु होगी। यह नवद्वीप धाम परम चिन्मय है। मृत्यु के बाद तुम निश्चय यहाँ आओगे। अब तुम दोनों नीलाचल में जाओ व श्रीजगन्नाथ जी की सेवा करो। इतना कहकर

श्रीगोरचन्द्र जी अदृश्य हो गये और प्रभु के विच्छेद में दोनों मूच्छित हो गये।

ओहे जीव! यहाँ के बड़े-बूढ़े कहते हैं कि यह श्रीजयदेव का स्थान है। श्रीजयदेव का स्थान देखकर, श्रीजीव गोस्वामी जी प्रेम में भूमि पर लोट-पोट होकर रोने लगे तथा रोते-रोते कहने — श्रीजयदेव कवि परम कृतार्थ हैं। पद्मावती देवी भी अति भाग्यशालिनी हैं। 'श्रीगीत गोविन्द' नामक ग्रन्थ धन्य है। उनका भगवान श्रीकृष्ण के प्रति अनुराग भी बार बार स्तव के योग्य है। हे नित्यानन्द प्रभो! श्रीजयदेव जी ने जो दिव्य श्रीकृष्ण

प्रेम - सिन्धु का आस्वादन किया था, कृपा करके उसका एक बिन्दु मुझे भी दे दो।

(घ) **विद्यानगर** — यह स्थान सभी प्रकार की विद्याओं का पीठस्वरूप है। इसे 'सारदापीठ' के नाम से भी कहा जाता है। ऋषिगण इस स्थान का आश्रय लेकर अविद्या पर जय प्राप्त करते हैं। इस स्थान पर वाल्मीकि जी ने काव्य रस, धन्वन्तरि जी ने आयुर्वेद व विश्वामित्र जी ने धनुर्विद्या की शिक्षा प्राप्त की थी। इस स्थान पर बैठकर महामुनि वेदव्यास ने कई पुराणादि शास्त्र प्रकाश किये थे एवं इसी स्थान पर

शौनकादि ऋषि वेदमंत्रों का उच्च स्वर से गान करते थे। इस उपवन में उपनिषदों ने श्रीगौरसुन्दर की आराधना की थी। श्रीगौरसुन्दर श्रीनवद्वीपमण्डल में आविर्भूत होंगे, यह जानकर देवगुरु वृहस्पति उनकी सेवा के लिए श्रीनवद्वीपमण्डल के अन्तर्गत इसी विद्यानगर में श्रीवासुदेव सार्वभौम रूप से आये थे तथा उन्होंने यहाँ पर एक विद्यालय की भी स्थापना की थी। किन्तु इस सन्देह से कि कहीं में दुनियावी विद्याजाल में फंसकर सर्वविद्यापति श्रीगौरसुन्दर की सेवा से वंचित न हो जाऊँ वे श्रीगौर भगवान के आविर्भाव

से पहले ही नीलाचल में जाकर मायावादी संन्यासियों के गुरु और अध्यापक रूप से मायावाद शास्त्र की व्याख्या करने लगे। श्रीगौरसुन्दर की नीलाचल - लीलाकाल के समय श्रीवासुदेव सार्वभौम ने उनकी कृपा से अविद्याविलास परित्याग करके पराविद्या — शुद्ध भक्ति का आश्रय ग्रहण किया था। श्रीमन्महाप्रभु जी ने संन्यास ग्रहण के बाद नीलाचल से श्रीनवद्वीपमण्डल में आकर इस विद्यानगर में सार्वभौम के पिता श्रीमहेश्वर विद्याविशारद के घर पर अवस्थान किया था।

इस विद्यानगर का तत्त्व “श्रीनवद्वीपधाम - माहात्म्य” ग्रन्थ के तेरहवें अध्याय में इस प्रकार वर्णित हुआ है —

“श्रीविद्यानगरे आसि' नित्यानन्द राय।
विद्यानगरेर तत्त्व श्रीजीवे शिवाय ।।

नित्यधाम नवद्वीप प्रलय समये ।
अष्टदल पद्मरूपे थाके शुद्ध हये ।।

सर्व अवतार आर धन्य जीव यत ।
कमलेर एकदेशे थाके कत शत।।

ऋतुद्वीप अन्तर्गत ए विद्यानगरे ।
मत्स्यरूपी भगवान सर्ववेद धरे ।।

सर्वविद्या थाके वेद आश्रय करिया।
श्रीविद्यानगर नाम एइ स्थाने दिया।

पुन: यबे सृष्टि मुखे ब्रह्मा महाशय ।
अति भीत हन देखि' सकल प्रलय ।।

सेइकाले प्रभु कृपा हय ताँर प्रति ।
एइ स्थाने पेये भगवाने करे स्तुति।।

मुख खुलिवार काले देवी सरस्वती ।
बह्म - जिहा हइते जन्मे अति
रूपवती।।

सरस्वती - शक्ति पेये देव चतुर्मुख ।
श्रीकृष्णे करेन स्तव पेये बड़ सुख ।।

सृष्टि यबे हय माया सर्वदिक् घेरि ।
विरजार पारे थाके गुणत्रय धरि ॥

माया प्रकाशित विश्वे विद्यार प्रकाश ।
करे ऋषिगण तबे करिया प्रयास ॥

एइ त' सारदा पीठ करिया आश्रय ।
ऋषिगण करे अविद्यार पराजय ॥

चौषट्टि विद्यार पाठ लय ऋषिगण।
धरातले स्थाने स्थाने करे विज्ञापन॥

ये ये ऋषि ये ये विद्या, करे अध्ययन।
एइ पीठे से सबार स्थान अनुक्षण ॥

श्रीवाल्मीकि काव्यरस एइस्थाने
पाय।
नारद कृपाय तेहँ आइल हेथाय ।।

धन्वन्तरि आसि' हेथा आयुर्वेद पाय ।
विश्वामित्र आदि धनुर्विद्या शिवि'
याय।।

शौनकादि ऋषिगण पड़े वेद- मंत्र ।
देव- देव महादेव आलोचय तंत्र ।।

ब्रह्मा चारिमुख हैते वेद- चतुष्टय ।
ऋषिगण - प्रार्थनाय करिला उदय।

कपिल रचिल सांख्य एइस्थाने बसि ।
न्याय तर्क प्रकाशिला श्रीगौतम
ऋषि।।

वैशेषिक प्रकाशिल क्रणभुक् मुनि ।
पातन्जलि योगशास्त्र प्रकाशे
आपनी।।

जैमिनी मीमांसाशास्त्र करिल प्रकाश।
पुराणादि प्रकाशिल ऋषि वेदव्यास ।।

पंचरात्र नारदादि ऋषि पंचजन।
प्रकाशिया जीवगणे शिखाये साधन ।।

एइ उपवने सर्व उपनिषद्गण ।
बहुकाल श्रीगौरांग करे आराधन ।।

अलक्ष्य श्रीगौरहरि से सबे कहिल
निराकार बुद्धि तब हृदय दूषिल ।।

तुमि सबे श्रुतिरूपे मोरे ना पाइबे।
आमार पार्षद - रूपे यबे जन्म लबे ।।

प्रकट - लीलाय तबे देखिबे आमाय ।
मम गुण कीर्तन करिबे उभराय ।।

ताहा शुनि' श्रुतिगण निस्तब्ध हईया।
गोपने आछिल हेथा काल
अपेक्षियाा।।"

एइ धन्य कलियुग सर्वयुग सार ।
याहाते हइल श्रीगौरांग अवतार ।।

विद्यालीला करिवेन गौरांगसुन्दर ।
गणसह वृहस्पति जन्मे अतः पर ।।

वासुदेव सार्वभौम सेई वृहस्पति ।
गौरांग तूषिते यत्न करिलेन अति ।।

प्रभु मोर नवद्वीपे श्रीविद्या - विलास ।
करिवेन जानि' मने हइया उदास।।

इन्द्रसभा परिहरि' निज-गण लये।
जन्मिलेन स्थाने स्थाने आनन्दित
ह'ये ।।

एइ विद्यानगरीते करि' विद्यालय।
विद्या प्रचारिल सार्वभौम महाशय ।।

पाछे विद्याजाले डूबे हाराइ गौरांग ।
एइ मने करि' एक करिलेन रंग ।।

निल शिष्यगणे राखि' नदीया - नगरे ।
गौर - जनम पूर्वे तेंह गेला देशान्तरे ।।

मने भावे यदि आमि हइ गौरदास।
कृपा करि' मोरे प्रभु लइवेन पाश ।।

एइ बलि' सार्वभौम याय नीलाचल।
मायावाद - शास्त्र तथा करिल
प्रबल।।

हेथा प्रभु गौरचन्द श्रीविद्या - विलासे।
सार्वभौम - शिष्यगणे जिने परिहासे ।

न्याय फाँकि करि' प्रभु सकले हाराय।
कभु विद्यानगरेते आइसे गौर राय ।।

अध्यापकगण आर पड़ुयारगण ।
पराजित ह'ये सबे करे पलायन ॥

गौरांगेर विद्या- लीला अपूर्व कथन
अविद्या छाड़ये तार ये करे श्रवण ॥

भावानुवाद — श्रीविद्यानगर में आकर श्रीनित्यानन्द प्रभु श्रीजीव गोस्वामी को विद्यानगर का क्या तत्व है अर्थात् विद्यानगर की क्या महिमा है, इसकी शिक्षा देते हैं। नित्यानन्द जी ने कहा कि ये प्रलय के समय में भी आठ पंखुड़ियों वाले कमल के खिले हुए फूल की तरह विराजमान रहता है। यही नहीं, जितने भी भगवान के अवतार हैं व भाग्यशाली

जीव हैं, वे भी इसी कमल की एक पंखुड़ी में रहते हैं। ऋतुद्वीप के अन्तर्गत इस विद्यानगर में मत्स्यरूपी भगवान सभी वेदों को धारण किये हुए हैं। इस स्थान पर सभी प्रकार की विद्या, वेदों को आश्रय करके रहती है। इसीलिए इस स्थान का नाम विद्यानगर हुआ। जब ब्रह्मा जी पुनः सृष्टि की रचना करने लगे, तब प्रलयजल को देखकर अति भयभीत हुए। उस समय प्रभु की उन पर कृपा हुई और वे इस स्थान को पाकर शान्त हुए व यहीं पर खड़े होकर उन्होंने भगवान की स्तुति की। स्तुति के लिये मुख खोलते समय, अति

रूपवती सरस्वती देवी ब्रह्मा जी की जिह्वा पर प्रकट हो गयी। सरस्वती की शक्ति पाकर ब्रह्मा जी बड़े आनन्द से श्रीकृष्ण का स्तव करने लगे। सृष्टि जब हुई तो माया ने विरजा के पार रह कर तीन गुणों को धारण करके पूरी पृथ्वी को चारों ओर से घेर लिया। उसके बाद माया द्वारा प्रकाशित विश्व में ऋषियों ने विद्या को प्रकाश करने का प्रयास किया। इसी 'सारदापीठ' का आश्रय करके ऋषिगण अविद्या को पराजय करते थे। ऋषियों ने चौंसठ विद्या का पाठ ही पृथ्वी पर विशेष रूप से प्रचार किया था। जिस जिस ऋषि ने जिस-

जिस विद्या का अध्ययन किया था, इस पीठ में उन सब का हमेशा स्थान है। श्रीनारद जी की कृपा से श्रीवाल्मीकि ऋषि ने काव्यरस इस स्थान से पाया था। धन्वन्तरि ने यहाँ आकर आयुर्वेद शास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया था। विश्वामित्र आदि यहाँ से धनुर्विद्या सीखकर गये। शौनकादि ऋषियों ने यहाँ वेदमंत्र पढ़े थे। देवदेव महादेव ने यहाँ तंत्र विद्या की चर्चा की थी। ऋषियों की प्रार्थना पर ब्रह्मा जी के चारों मुखों से, चारों वेदों का उदय हुआ था। कपिलदेव जी ने इस स्थान पर बैठकर सांख्य की रचना की थी। श्रीगौतम ऋषि ने यहीं पर

न्याय तर्क का प्रकाश किया था। यहीं पर कणभुक् मुनि ने वैशेषिक दर्शन का प्रकाश किया था। पातन्जली ऋषि ने यहीं पर योगशास्त्र का प्रकाश किया था। जैमिनीजी ने यहाँ मीमांसा शास्त्र का प्रकाश किया था। पुराणादि को ऋषि वेदव्यास ने यहीं प्रकाश किया था। पंचरात्र व नारदादि पांच ऋषियों ने यहीं पर सभी तरह के ज्ञान को प्रकाशित करके जीव को साधन की शिक्षा दी थी। इस उपवन में सब उपनिषद्गणों ने जब काफी लम्बे समय तक श्रीगौरांगदेव जी की आराधना की तो तब आकाशवाणी के रूप में श्रीगौरहरि ने सब को कहा

कि निराकार बुद्धि से तुम सब का हृदय दूषित हो गया है, इसलिए तुम सब श्रुतियाँ इस रूप से मुझे नहीं पा नहीं सकोगी। हाँ, कलियुग के प्रारम्भ में जब तुम सभी मेरे पार्षद रूप से जन्म लोगी तब तुम मेरी प्रकट - लीला में मेरा दर्शन कर सकोगी एवं मेरा गुण-कीर्तन उच्च स्वर से कीर्तन करोगी। परम दयालु श्रीगौरांग महाप्रभु जी के आशीर्वाद को सुनकर श्रुतिगण निश्चेष्ट हो गईं एवं यहाँ गुप्त रूप से रहकर महाप्रभु जी के प्रकट काल की प्रतीक्षा करने लगीं।

श्रीमन् नित्यानन्द जी कहते हैं कि यह धन्य कलियुग सब युगों का

सार है क्योंकि इस कलियुग में श्रीगौरांग का अवतार हुआ है। श्रीगौरसुन्दर जी विद्यालीला करेंगे यह जानकर ही वृहस्पति ऋषि ने अपने संगी- साथियों के साथ यहाँ जन्म ग्रहण किया। श्रीवासुदेव सार्वभौम ही वृहस्पति ऋषि हैं जिन्होंने बड़े यत्न के श्रीगौरांगदेव जी को सन्तुष्ट किया था।

भगवान श्रीचैतन्य महाप्रभु जी की लीला नवद्वीप में होगी, यह जानकर वृहस्पति जी ने इन्द्र की सभा को त्याग कर अपने गणों के साथ नवद्वीप के विभिन्न स्थानों पर जन्म ग्रहण किया। इस विद्यानगरी में

विद्यालय बनाकर श्रीसार्वभौम महाशय जी ने विद्या का प्रचार किया था। एक बार वे यह सोच रहे थे कि कहीं ऐसा न हो कि मैं जागतिक विद्या-रस में मत्त हो जाने पर श्रीगौरांगदेव को न भूल जाऊँ; परन्तु साथ ही उनके मन में यह भावना आयी कि सचमुच यदि में गौरदास हूँ, तब तो प्रभु कृपा करके मुझे अपने निकट लायेंगे ही; अतः सार्वभौम भट्टाचार्य अपने शिष्यों को नवद्वीप में रखकर गौर - जन्म से पहले ही नदीया नगर को छोड़कर नीलाचल धाम चले गये एवं वहाँ मायावाद शास्त्र का उन्होंने खूब प्रचार किया।

इधर श्रीगौरांग महाप्रभु जी ने विद्या - विलास के समय, श्रीसार्वभौम के शिष्यों को परिहास में ही जीत लिया था। जब कभी श्रीगौरहरि विद्यानगर में आते थे, तब न्याय की फाकि अर्थात् पूर्वपक्ष, वितंडा, छल, निग्रह द्वारा सब को आसानी से हरा देते थे। सभी अध्यापक एवं सभी विद्यार्थी श्रीगोरसुन्दर से हारकर वहाँ से भाग जाते थे। श्रीगौरांगदेव जी की विद्यालीला अपूर्व है, जो इसे श्रवण करता है, अविद्या माया उसे छोड़ देती है।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव